कैंसर उपचार हेतु प्रतिरक्षा कोशिकाओं के विकास विधि में सुधार

आईआईटी मुंबई के शोधकर्ताओं ने टी-कोशिका आधारित कैंसर उपचारों के लिए प्रयोगशाला में संवर्धित प्रतिरक्षा कोशिकाओं को प्राप्त करने की एक कार्यक्षम विधि विकसित की है।

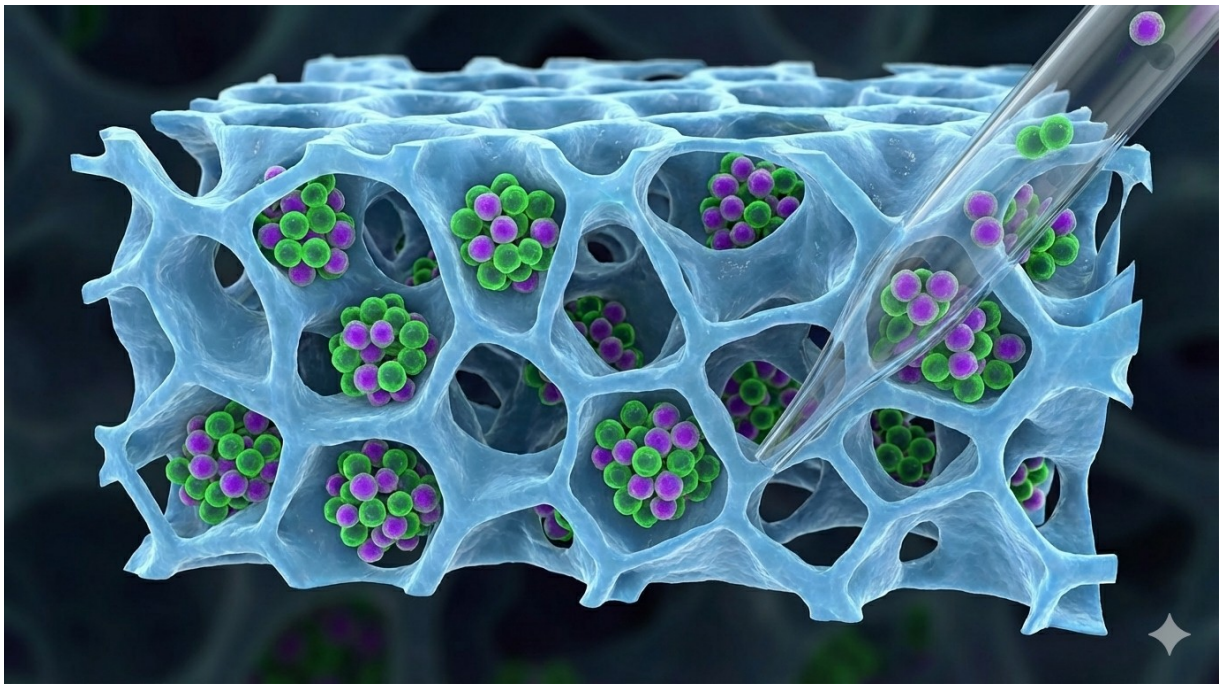

छवि: गूगल जेमिनी नैनो बनाना द्वारा निर्मित

इम्यूनोथेरेपी, यानि प्रतिरक्षा चिकित्सा पद्धति कैंसर के उपचार में अत्यंत आशाजनक सिद्ध हुई है क्योंकि यह शरीर की अपनी प्रतिरक्षा प्रणाली को कैंसर की कोशिकाओं को पहचानने और उन्हें नष्ट करने के लिए प्रोत्साहित करती है। सीएआर टी-सेल (CAR T-Cell) जैसी इम्यूनोथेरेपी विधियों के अंतर्गत, चिकित्सक रोगी के रक्त से टी-कोशिकाओं को निकालते हैं एवं प्रयोगशाला में उन्हें इस प्रकार संवर्धित करते हैं जिससे वे कैंसर कोशिकाओं पर अधिक प्रभावी आक्रमण कर सकें। इन संशोधित कोशिकाओं की संख्या में पर्याप्त वृद्धि करने के पश्चात इन्हें पुनः रोगी के शरीर में संचारित कर दिया जाता है ताकि ये कैंसर के विरुद्ध संघर्ष में सहायक हो सकें।

टी-कोशिका आधारित इम्यूनोथेरेपी की एक मुख्य आवश्यकता है स्वस्थ और सक्रिय टी-कोशिकाओं की प्रचुर उपलब्धता सुनिश्चित करना। शरीर के बाहर विकसित की गई इन कोशिकाओं को अत्यंत सावधानीपूर्वक एकत्रित किया जाना चाहिए ताकि जब इन्हें पुनः रोगी के शरीर में डाला जाए, तब ये जीवित एवं क्रियाशील बनी रहें। अतः इन उपचार पद्धतियों को प्रभावी बनाने के लिए टी-कोशिकाओं के संवर्धन और प्राप्त करने के सुरक्षित एवं कुशल पद्धतियों को खोजना एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है।

एक नवीनतम अध्ययन में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) मुंबई के जैव विज्ञान और जैव अभियांत्रिकी विभाग के शोधकर्ताओं ने प्राध्यापिका प्रकृति तयालिया के नेतृत्व में एक सरल पद्धति विकसित की है जिससे प्रयोगशाला में संवर्धित टी-कोशिकाओं को कोमलता से पुनः प्राप्त किया जा

सकता है। यह शोध मोनाश विश्वविद्यालय के प्रोफेसर नील कैमरॉन के सहयोग से संपन्न हुआ और इसे *बायोमैटेरियल्स साइंस* नामक शोध पत्रिका में प्रकाशित किया गया है।

अनेक प्रयोगशालाओं में टी-कोशिकाओं को प्लास्टिक की सपाट थालियों पर विकसित किया जाता है। यद्यपि इनका उपयोग करना सरल है, परंतु ये सपाट सतहें मानव शरीर के भीतर कोशिकाओं के वास्तविक व्यवहार को नहीं दर्शाती हैं। शरीर के भीतर टी-कोशिकाएं जटिल ऊतकीय स्थानों से होकर गुजरती हैं जो सघन कोशिकाओं और सूक्ष्म तंतुओं से बने त्रि-आयामी जालों से घिरे होते हैं। इस प्राकृतिक परिवेश का अधिक अच्छे रूप से अनुकरण करने हेतु शोधकर्ताओं ने त्रि-आयामी पाड़ अथवा स्कैफोल्ड्स का उपयोग करना प्रारंभ कर दिया है। स्कैफोल्ड्स कृत्रिम प्रधार होते हैं और कोशिकाओं के संवर्धन हेतु एक छिद्रयुक्त एवं तंतुमय संरचना प्रदान करते हैं।

प्रा. तयालिया का शोधदल इलेक्ट्रोस्पिनिंग, अर्थात विद्युत्-कताई नामक प्रक्रिया द्वारा निर्मित एक विशिष्ट प्रकार के स्कैफोल्ड पर कार्य करता है। ये इलेक्ट्रोस्पिनिंग द्वारा बनाये गए, अर्थात 'इलेक्ट्रोस्पन' स्कैफोल्ड अत्यंत सूक्ष्म तंतुओं से बनी चटाइयों के समान दिखाई देते हैं, जो किसी मछली पकड़ने वाले घने जाल जैसी प्रतीत होती हैं। इस शोधदल एवं अन्य शोधकर्ताओं द्वारा किए गए पूर्व के अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि ऐसे स्कैफोल्ड पर विकसित की गई टी-कोशिकाएं अधिक सक्रिय हो जाती हैं और उनकी संख्या में तीव्र वृद्धि होती है।

इन लाभों के साथ ही एक चुनौती भी जुड़ी हुई है। जैसे-जैसे टी-कोशिकाएं इन तंतुओं के मध्य स्थित गहरे स्थानों में प्रवेश करती हैं, उन्हें वहां से बाहर निकालना कठिन हो जाता है। किसी भी चिकित्सा पद्धति के लिए कोशिकाओं को संकलित करना, उनका परीक्षण करना और अंततः उन्हें रोगियों के शरीर में पहुंचाना आवश्यक है । यदि बहुत अधिक संख्या में कोशिकाएं इस स्कैफोल्ड के जाल में ही जकड़ी हुई रह जाती हैं, तो इस पूरी प्रक्रिया की कार्यदक्षता बहुत कम हो जाती है।

प्रा. तयालिया स्पष्ट करती हैं, *"कोशिकाओं को प्राप्त करना सुनने में तो सरल लगता है, परंतु प्रत्यक्ष व्यवहार में यह सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक सिद्ध होती है। पर्याप्त संख्या में स्वस्थ कोशिकाओं के अभाव में हम न तो उनका उचित परीक्षण कर सकते हैं और न ही उन्हें उपचार के लिए उपयोग में ला सकते हैं।"*

इस समस्या के समाधान हेतु शोध दल ने पॉलीकैप्रोलैक्टोन नामक पदार्थ से बने इलेक्ट्रोस्पन स्कैफोल्ड के भीतर 'जुरकाट' टी-कोशिकाओं का संवर्धन किया। जुरकाट टी-कोशिकाएं मानव कोशिका-वंश (सेल लाईन) होते हैं जिन्हें प्रयोगशाला में टी-कोशिका का जीव विज्ञान, कैंसर एवं एचआईवी के अध्ययन हेतु विकसित किया गया है। सूक्ष्मदर्शी के माध्यम से शोधकर्ताओं ने देखा कि ये कोशिकाएं सक्रिय रूप से स्कैफोल्ड के भीतर चली गईं और तंतुओं के मध्य दृढ़ता से समा गईं। संवर्धन माध्यम को नलिका (पिपेट) की सहायता से तीव्रता से स्वच्छ करने पर भी सभी कोशिकाओं को बाहर नहीं निकाला जा सका, विशेष रूप से वे कोशिकाएं जो तंतुओं के जोड़ पर अटकी हुई थीं।

अध्ययन के मुख्य लेखक डॉ. जयदीप दास का कहना है *"सैद्धांतिक रूप से टी-कोशिकाओं को संभालना सरल माना जाता है क्योंकि वे 'सस्पेंशन कोशिकाएं' होती हैं, अर्थात वे बहुधा तरल में स्वतंत्र रूप से तैरती रहती हैं। वास्तविकता में जब इन्हें सघन तंतुओं के जाल में रखा जाता है, तो ये उन्हें दृढ़ता से जकड़ लेती हैं।"*

शोधकर्ताओं ने कोशिकाओं को संकलित करने के लिए तीन विभिन्न विधियों का परीक्षण किया। पहली

विधि में कोशिकाओं को संवर्धन माध्यम से पिपेट की सहायता से बाहर निकाला (मैन्युअल फ्लशिंग)। दूसरी विधि में ट्रिप्सिन एंजाइम के एक रूप, ट्रिपल (TrypLE) का उपयोग किया गया जो प्रयोगशालाओं में कोशिकाओं को पृथक करने में सहायता करता है। तीसरी विधि में एक्यूटेज़ का प्रयोग किया गया जो एक तुलनात्मक रूप से सौम्य एंजाइम है, जिसे कोशिकाओं को अत्यंत कोमलता से निकालने के लिए निर्मित किया गया है।

प्रत्येक विधि के लिए शोधकर्ताओं ने तीन परिणामों का मापन किया : प्राप्त की गई कोशिकाओं की कुल संख्या, जीवित बची कोशिकाओं की संख्या एवं कोशिकाओं का पुन: विकसित होने में सक्षम होना या न होना। यद्यपि तीनों विधियों में कोशिकाओं की कुल प्राप्ति लगभग समान थी, परंतु एक्यूटेज़ आधारित पद्धति से अधिक संख्या में सक्रिय और सक्षम कोशिकाएं प्राप्त हुईं। प्राप्त की गई कोशिकाओं की कार्यक्षमता का परीक्षण करने के लिए शोध दल ने उन्हें प्राप्ति के पश्चात एक सप्ताह तक विकसित होने दिया। *"हम ऐसी कोशिकाएं चाहते थे जो न केवल जीवित हो, अपितु जिनका वर्तन अब भी टी-कोशिकाओं की भांति हो,"* डॉ. दास बताते हैं।

ट्रिप्सिन के माध्यम से प्राप्त की गई कोशिकाओं में मृत्यु दर अधिक देखी गई। जीवित बची कुछ कोशिकाओं ने भी अपनी उन महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों को खो दिया जो प्रतिरक्षा प्रणाली के उचित कार्य हेतु आवश्यक होती हैं। इसके विपरीत एक्यूटेज़ की सहायता से निकाली गई कोशिकाएं अधिक संख्या में जीवित रहीं और उनका व्यवहार स्वस्थ टी-कोशिकाओं के समान था। यह कोशिकाएं क्लस्टर या गुच्छे निर्माण करने में सक्षम पायी गयी, जो टी-कोशिकाओं के विभाजन से पूर्व का एक अनिवार्य चरण है। पुनः प्राप्ति के बाद भी इन कोशिकाओं की वृद्धि निरंतर सुचारू रूप से होती रही।

"ट्रिप्सिन जैसे एंजाइमों का उपयोग कोशिकाओं के लिए कठोर होता है और उन महत्वपूर्ण सतही प्रोटीनों को क्षति पहुँचा सकता है जो प्रतिरक्षा संकेतन और सक्रियण के लिए आवश्यक होते हैं। इससे कोशिका की उपचारात्मक उपयोगिता कम हो जाती है। एक्यूटेज़ एंजाइम इस समस्या से बचने के लिए पर्याप्त सौम्य प्रतीत होता है," प्रा. तयालिया कहती हैं।

इस अध्ययन के निष्कर्ष प्रयोगशालाओं को सीएआर टी-सेल जैसे उपचारों के लिए कोशिकाएं विकसित करते समय इन स्कैफोल्ड का प्रभावी उपयोग करने में सहायता कर सकते हैं। *"यदि हम चाहते हैं कि ये उन्नत चिकित्सा पद्धतियां रोगियों तक पहुंचे, तो प्रत्येक चरण अत्यंत महत्वपूर्ण है। हम कोशिकाओं को कैसे विकसित करते हैं और उन्हें कैसे पुनः प्राप्त करते है, यह उपचार की प्रत्यक्ष सफलता को प्रभावित कर सकता है,"* प्रा. तयालिया रेखांकित करती हैं।

इस कार्य को आगे बढ़ाते हुए शोध दल ने यह भी पाया है कि इन स्कैफोल्ड पर विकसित की गई टी-कोशिकाएं कैंसर कोशिकाओं को अधिक प्रभावी ढंग से नष्ट कर सकती हैं। शोधकर्ता भविष्य में इन निष्कर्षों का पशु मॉडलों पर परीक्षण करने एवं टी-कोशिकाओं से युक्त इन स्कैफोल्ड को सीधे शरीर के भीतर स्थापित करने की संभावनाओं को खोजने की योजना बना रहे है।

वित्तीय सहायता सूचना: जैव प्रौद्योगिकी विभाग—भारत सरकार, मोनाश विश्वविद्यालय, स्वास्थ्य अनुसंधान विभाग—भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद, ऑस्ट्रेलियन रिसर्च काउंसिल और यूरोपीय संघ।

VETTED / UNVETTED	Vetted

Title of Research Paper	Non-destructive approaches for retrieving T-cells from fibrous scaffolds for therapeutic applications
DOI of the Research Paper as a link	https://doi.org/10.1039/D5BM00877H
List of all researchers with affiliations	Jaydeep Das - IITB-Monash Research Academy, Indian Institute of Technology Bombay, Mumbai Neil R. Cameron - Department of Materials Science and Engineering, Monash University, Australia and School of Engineering, Warwick University, UK, and Nanotechnology & Catalysis Research Centre, Institute for Advanced Studies (IAS), Universiti Malaya, Kuala Lumpur, Malaysia Prakriti Tayalia- Department of Biosciences and Bioengineering, Indian Institute of Technology Bombay, Mumbai
Email of researcher/s	prakriti@iitb.ac.in, neil.cameron@monash.edu,
Writer name	Manjeera Gowravaram
Transcreator name	Shilpa Inamdar-Joshi
Credits to Graphic:	Created using Google Gemini Nano Banana
Subject [FOR EDITOR] - Please Highlight in RED (Multiple allowed)	Science/Technology/Engineering/Ecology/ Health/Society
Article to be Sectioned Under [FOR EDITOR] - Please Highlight in RED	Deep Dive/Friday Features/Fiction Friday/Joy of Science/News+Views/News/Scitoons/Catching up/OpEd/Featured/Sci-Qs/Infographics/Events
Social Media TAGS separated by Comma	#Immunotherapy #Cancerresearch #Tcells
Social Media Posts Suggestions/ Links to interesting relevant content [optional] [writer]	
Social Media Handles to be added	@iitbombay, @iitbmonash

Social Media handles of writer	https://www.linkedin.com/in/manjeera-gowravaram/
Social Media handles of researchers	https://www.linkedin.com/in/jaydeep-das-ph-d-29b9a189 https://www.linkedin.com/in/prakriti-tayalia-9814b23/
Funding information (Source: Research paper)	Department of Biotechnology, Monash University, Department of Health Research—Indian Council of Medical Research, Australian Research Council, The European Union.
Conflict of Interest/Competing Interest information (Source: Research paper)	None
Co-PI information (Source: Research paper)	Neil R. Cameron - Department of Materials Science and Engineering, Monash University, Australia and School of Engineering, Warwick University, UK, and Nanotechnology & Catalysis Research Centre, Institute for Advanced Studies (IAS), Universiti Malaya, Kuala Lumpur, Malaysia
Location:	Mumbai